अधिकार और कर्तव्य (Right and Duty)

मानव के अधिकार के संबंध में भारतीय मूल्यों की परम्परा सम्पन्न
प्राचीनतम है। ये अधिकार इस देश की जनता द्वारा वैदिक काल
पोषित हैं। मानव के मूलभूत जीवन मूल्यों का ही निरूपण करते हैं।
जिसका समर्थन भारतीय संविधान आमुख (प्रस्तावना) में किया है।
जिसका उद्देश्य व्यक्ति की गरिमा का संरक्षण तथा उसे ऐसा वातावरण
प्रदान करना है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास ह
सके। भारत में मानवजीवन के उच्चतम आदर्शों को प्रतिष्ठित किया गया
"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः" अर्थात "सभी सुखी रहें" यह भारतीय धर्म
का आधार है। वसुधैव कुटुम्बकम अर्थात सारा विश्व एक परिवार है
जो भारतीय संस्कृति हमारे हृदय की विशालता और जीवन के प्रति व्या
दृष्टिकोण को दर्शाता है।
स्वभावतः सभी मनुष्य समान रूप से उन्मुक्त तथा स्वाधीन हैं अनेक
कुछ जन्मजात अधिकार हैं जिन्हें मनुष्य स्वयं अपने जीवन अथवा अन्य
सम्बन्धों से पृथक नहीं कर सकते। जैसे जीवन और स्वतंत्रता के अधिकारों का
उपभोग सम्पत्ति के अर्जन और सुखी जीवन के लक्ष्य के अधिकार इत्या
विचार कोमल जीवन की है।
प्रकृति प्रदत्त मनुष्य को भिन्न-भिन्न प्रकार की शक्तियाँ प्र
है लेकिन उन शक्तियों के प्रयोग के लिए कुछ बाहरी सुविधाओं की
आवश्यकता होती है। राज्य का सर्वोच्च लक्ष्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्ण
विकास है। अधिकार का अभिप्राय राज्य द्वारा व्यक्ति को दी गई कुछ का
करने की स्वतन्त्रता या सकारात्मक सुविधा प्रदान करना है जिससे व्यक्ति
अपनी शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक शक्तियों का पूर्ण विकास कर स
विभिन्न विद्वानों ने अधिकार की निम्नलिखित परिभाषाएँ दी हैं।
लास्की के अनुसार — अधिकार सामाजिक जीवन की वे परिस्थितियाँ
हैं जिनके अभाव में सामान्यतया कोई भी व्यक्ति अपने व्यक्तित्व
विकास नहीं कर सकता।
ग्रीन का कहना है कि "अधिकार वह शक्ति है जिसकी लोक-कल्याण
के लिए माँग की जाती है और मान्यता उन्हें प्राप्त होती है।"
वाइल्ड के अनुसार — "अधिकार कुछ विशेष कार्यों को करने की स्वतन्त्रता
की उचित माँग है।" "Right is a reasonable claim to freedom

in the exercise of certain activities."

बोसांके के अनुसार "अधिकार वह माँग है जिसे समाज स्वीकार करता और राज्य लागू करता है।"

"It implies is a claim recognised by the society and enforced by the state."

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि "समाज द्वारा स्वीकृत होने पर ही माँगे अधिकार का रूप लेती है तथा समाज से बाहर अधिकार का कोई अर्थ नहीं रह जाता। अधिकार का आधार [illegible] कल्याण है तथा इसका उपयोग भी समाज कल्याण के हित में होता है।"

उपर्युक्त विद्वानों द्वारा अधिकार की गई परिभाषाओं के आधार पर अधिकार के निम्नलिखित विशेषताएँ कहे जा सकते हैं।

(1) सामाजिक स्वरूप :- अधिकार का सर्वप्रथम लक्षण यह है कि अधिकार का अस्तित्व समाज में ही संभव है। अधिकार के लिए सामाजिक [illegible] आवश्यक है। व्यक्ति की सुविधाओं की पूर्ति जब समाज कर देती है उसे ही अधिकार कहा जाता है।

(2) कल्याणकारी स्वरूप :- अधिकारों का मूल लक्ष्य तो [illegible] व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास से जुड़ा है, इसलिए नैतिकता तथा [illegible] अधिकार का आधार है।

(3) लोकहित में प्रयोग :- अधिकार का प्रयोग व्यक्ति के [illegible] सम्पूर्ण समाज की उन्नति के लिए आवश्यक है। इसलिए अधिकार [illegible] अधिकार सामाजिक स्वीकृति है।

(4) राज्य का संरक्षण :- अधिकार की रक्षा करता है और [illegible] उसकी आवश्यकता व्यवस्था करता है, जैसे व्यक्ति को [illegible] की व्यवस्था करना, यह व्यक्तित्व के विकास के लिए आवश्यक है समाज भी स्वीकार कर लेती है लेकिन जबतक उसे राजकीय [illegible] प्राप्त न हो तबतक उसे अधिकार नहीं कहा जा सकता।

(5) सार्वभौमिकता या सर्वव्यापकता :- अधिकार की एक अन्य विशेषता यह भी है कि अधिकार समाज के सभी व्यक्तियों को समान रूप [illegible] प्रदान किये जाते हैं और इस संबंध में जाति, धर्म, लिंग और [illegible]